



2026:AHC-LKO:17600-DB

इलाहाबाद उच्च न्यायालय

लखनऊ

विशेष अपील दोषपूर्ण सं. - 28/2024

उत्तर प्रदेश राज्य, प्रमुख सचिव, वन विभाग के माध्यम से एवं अन्य

....अपीलकर्ता (गण)

बनाम

श्याम रंग द्विवेदी

..... प्रतिवादी (गण)

अपीलकर्ता (गण) के अधिवक्ता

: सी.एस.सी.

प्रतिवादी (गण) के अधिवक्ता

: रमेश कुमार श्रीवास्तव

न्यायालय सं. - 1

माननीय न्यायमूर्ति राजन राय

माननीय न्यायमूर्ति अबधेश कुमार चौधरी

1. राज्य-अपीलकर्ताओं की ओर से विद्वान अपर मुख्य स्थायी अधिवक्ता तथा प्रतिवादी की ओर से विद्वान अधिवक्ता को सुना और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री का अवलोकन किया।

2. यह विशेष अपील अपीलकर्ताओं द्वारा इलाहाबाद उच्च न्यायालय नियमावली, 1952 के अध्याय VIII नियम 5 के अंतर्गत दाखिल की गई है, जिसमें विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा रिट-ए सं. 4274/2012 (श्याम रंग द्विवेदी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य) में

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



दिनांक 27.01.2023 को पारित निर्णय और आदेश को चुनौती दी गई है। यह अपील दिनांक 12.01.2024 को दाखिल की गई है। कार्यालय द्वारा दी गई जानकारी के अनुसार, दिनांक 12.01.2024 तक इसमें 319 दिनों का विलंब हुआ है। ऐसी अपील दाखिल करने की परिसीमा अवधि, जैसा कि इलाहाबाद उच्च न्यायालय नियमावली, 1952 के अध्याय IX नियम 10 सपठित परिसीमा अधिनियम, 1963 की अनुसूची के अनुच्छेद 117 के अंतर्गत 30 दिन निर्धारित है। अपील दाखिल करने में हुए विलंब को क्षमा करने हेतु एक आवेदन भी दाखिल किया गया है, जिसके समर्थन में एक शपथ पत्र प्रस्तुत किया गया है।

3. हमने विलंब क्षमादान के आवेदन के समर्थन में दिए गए शपथपत्र का अध्ययन किया है और माननीय उच्चतम न्यायालय के **शिवम्मा (मृत) द्वारा विधिक प्रतिनिधि बनाम कर्नाटक हाउसिंग बोर्ड और अन्य 2025 एससीसी ऑनलाइन 1969 में दिनांक 12.09.2025** को दिए गए निर्णय के आलोक में इस पर विचार किया है।

4. यद्यपि, जिस विवादित निर्णय को चुनौती दी गई है, उसका दिनांक 27.01.2023 है, लेकिन अपीलकर्ता के अनुसार, उन्हें इसकी जानकारी दिनांक 01.03.2023 को मिली। यद्यपि, इस बात का कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया गया है कि क्या स्थायी अधिवक्ता जो कि उक्त विवादित निर्णय सुनाए जाने के समय न्यायालय में उपस्थित थे क्योंकि प्रत्येक न्यायालय में राज्य की ओर से अधिवक्ताओं का एक पूरा समूह उपस्थित रहता है, ने अपीलकर्ताओं को इस निर्णय के पारित होने के बारे में सूचित किया था या नहीं। इस पहलू पर शपथपत्र पूरी तरह से मौन है।

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

5. शपथपत्र के प्रस्तर-6 में उल्लेख है कि दिनांक 24.03.2023 को प्रतिवादी-याचिकाकर्ता के नियमितीकरण पर विचार करने के लिए एक समिति का गठन किया गया था, जिसने दिनांक 01.09.2023 को अर्थात् अपने गठन के लगभग पाँच माह से भी अधिक समय बाद अपनी रिपोर्ट सौंपी। इस रिपोर्ट में कहा गया था कि वह नियमितीकरण के लिए पात्र नहीं है। यदि ऐसा रहा हो, फिर भी यह समझना मुश्किल है कि 319 दिनों के अत्यधिक विलंब के लिए इसे किस प्रकार एक स्पष्टीकरण माना जा सकता है। यह भी कहा गया है कि मुख्य स्थायी अधिवक्ता से विधिक राय मांगी गई थी, जिन्होंने दिनांक 29.05.2023 को अपनी राय दी, इस राय के अनुसार, विवादित निर्णय को चुनौती दिया जाना आवश्यक था। यदि ऐसा ही था और विधिक राय दिनांक 29.05.2023 को दे दी गई थी, तो फिर यह प्रश्न उठता है कि अपील इतने विलंब से अर्थात् दिनांक 12.01.2024 को क्यों दाखिल की गई?

6. शपथपत्र में कहा गया है कि विशेष अपील दाखिल करने का प्रस्ताव दिनांक 05.09.2023 के पत्र के माध्यम से वन संरक्षक को भेजा गया था। यहाँ भी, मुख्य स्थायी अधिवक्ता द्वारा विधिक राय दिए जाने की तिथि और वन संरक्षक द्वारा मामले को आगे बढ़ाए जाने के बीच पाँच माह से अधिक का अंतराल है, ऐसा लगता है मानो अपीलकर्ता अपील दाखिल करने के लिए अनिच्छुक था, अन्यथा वे अधिक शीघ्रता से कार्रवाई करते। वन संरक्षक ने दिनांक 06.09.2023 के अपने पत्र के माध्यम से मामला मुख्य वन संरक्षक (मध्य क्षेत्र) को भेजा, जिन्होंने इसे आगे मुख्य वन संरक्षक (विधिक वाद) को भेज दिया। बाद वाले अधिकारी ने फिर दिनांक 14.09.2023 के अपने पत्र के माध्यम से मामला विधि विभाग

को अग्रेषित किया। राज्य सरकार के वन विभाग ने फिर मामला विधि विभाग को अग्रेषित किया। शेष अनुच्छेद सिर्फ यह वर्णन करते हैं कि फ़ाइल कैसे एक मेज से दूसरी मेज पर घूमती रही, जो **शिवम्मा (मृत) (उपर्युक्त)** के अनुसार, विलंब को क्षमा करने के लिए शायद ही कोई स्पष्टीकरण है।

7. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **शिवम्मा (मृत) (उपर्युक्त)** के वाद में यह माना है कि "पर्याप्त कारण" अभिव्यक्ति स्वयं अपेक्षापूर्ण और पुराने दावों को आगे बढ़ाने की समस्या का रामबाण इलाज नहीं है। इस अभिव्यक्ति की व्याख्या न्याय-उन्मुख लचीलेपन के साथ की जानी चाहिए, ताकि उन परिस्थितियों के लिए निर्दोष वादियों को दंडित न किया जाए जो उनके नियंत्रण से परे थीं। न्यायालयों को घोर अपेक्षापूर्ण, जानबूझकर की गई निष्क्रियता, या सामान्य उदासीनता को क्षमा नहीं करना चाहिए, क्योंकि ऐसा करने से "राज्य के हित में है कि वादों का अंत हो" के सिद्धांत का हनन होगा और उस निश्चितता को अस्थिर किया जाएगा जिसे परिसीमा विधि सुरक्षित करना चाहता है। 'पर्याप्त कारण' अभिव्यक्ति की व्याख्या इस प्रकार से की जानी चाहिए जो परिसीमा विधि के अनुशासन को बनाए रखते हुए, वास्तविक न्याय को बढ़ावा दे। न्यायालयों को सहानुभूति या तकनीकी कठोरता से प्रभावित नहीं होना चाहिए, बल्कि इसके बजाय इस बात का विवेकपूर्ण मूल्यांकन करना चाहिए कि क्या आवेदक ने अपने उपचार की मांग करते समय उचित तत्परता से कार्य किया था। जहाँ स्पष्टीकरण, विश्वसनीय और सामान्य मानवीय आचरण के अनुरूप है, वहाँ न्यायालयों ने क्षमादान का रुख अपनाया है। जहाँ अपेक्षापूर्ण, सदभावना की कमी, या अपेक्षापूर्ण दृष्टिकोण स्पष्ट है, वहाँ क्षमादान अस्वीकार कर दिया गया है। अपीलकर्ताओं ने न तो उचित सावधानी से कार्य किया है, और न ही उनके द्वारा दिया गया स्पष्टीकरण

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

विश्वसनीय है या सामान्य मानवीय आचरण के अनुरूप है। उपर्युक्त कारणों से, उनकी ओर से असावधानी, सदभावना की कमी और उपेक्षापूर्ण व्यवहार स्पष्ट दिखाई देता है।

8. माननीय उच्चतम न्यायालय ने आगे यह भी कहा है कि न्यायालयों को यह ध्यान रखना चाहिए कि केवल गुण-दोष के आधार पर वाद मज़बूत होना, विलंब को क्षमा करने का कोई आधार नहीं है। जब विलंब को क्षमा करने के लिए कोई आवेदन न्यायालय के समक्ष आता है, तो जाँच केवल इस बात तक सीमित रहती है कि क्या अपील या कार्यवाही को निर्धारित समय-सीमा के भीतर दाखिल न करने के लिए कोई "पर्याप्त कारण" सिद्ध किया गया है। मूल वाद के गुण-दोष इस जाँच से पूरी तरह से अप्रभावित रहते हैं। यदि न्यायालय इस स्तर पर मामले के गुण-दोष को देखने लगे, तो इससे प्रारंभिक प्रक्रियात्मक प्रश्नों और वास्तविक निर्णय के बीच की सीमाएँ धुंधली हो जाएँगी, जिससे न्यायिक जाँच के दो अलग-अलग चरण आपस में मिल जाएँगे। परिसीमा अधिनियम की धारा 5 का उद्देश्य यह निर्धारित करना नहीं है कि दावा विधिक या तथ्यात्मक रूप से कितना मज़बूत है बल्कि केवल यह देखना है कि क्या आवेदक के पास विलंब के लिए कोई उचित स्पष्टीकरण था। "पर्याप्त कारण" की कसौटी को मामले के गुण-दोष की जाँच से प्रतिस्थापित नहीं जा सकता। विलंब को क्षमा करना एक विवेकाधीन मामला है जो विलंब के स्पष्टीकरण पर आधारित होता है, न कि वाद की सफलता की संभावनाओं पर। यदि गुण-दोष पर विचार किया जाता है, तो एक मज़बूत वाद वाले वादी को उपेक्षा के बावजूद विलंब की क्षमा मिल सकती है, जबकि एक कमज़ोर वाद वाले वादी का आवेदन, भले ही उसने विलंब का पर्याप्त कारण बताया हो, अस्वीकार किया जा सकता है। इससे विधि का असमान और असंगत प्रयोग होगा, जिससे उस एकसमान मानक को ठेस पहुँचेगी जिसे बनाए रखने के लिए

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

परिसीमा का सिद्धांत बनाया गया है। माननीय उच्चतम न्यायालय ने एक और व्यावहारिक कारण बताया है कि विलंब को क्षमा करने के स्तर पर गुण-दोष पर विचार क्यों नहीं किया जाना चाहिए, वह यह है कि इससे न्यायालय का मन, मामले की मुख्य सुनवाई शुरू होने से पहले ही, किसी एक पक्ष के प्रति पूर्वाग्रही होने का खतरा रहता है। गुण-दोष पर समय से पहले विचार करने से न्यायालय अनजाने में ही एक ऐसा दृष्टिकोण बना सकती है जो बाद के निर्णय की निष्पक्षता को प्रभावित कर सकता है। इस स्तर पर आवश्यक न्यायिक अनुशासन की माँग है कि केवल विलंब के कारण की जाँच की जाए, और उससे अधिक कुछ नहीं। इसलिए, हम इस स्तर पर मामले के गुण-दोष पर विचार नहीं कर सकते।

9. माननीय उच्चतम न्यायालय ने इस बात पर भी विचार किया है कि क्या परिसीमा अधिनियम की धारा 5 के अंतर्गत अकर्मण्यता और लापरवाही के लिए किसी प्रकार की उदारता बरतने की कोई गुंजाइश थी। इस विषय पर पूर्व के कई निर्णयों पर विचार करने के बाद, अंततः न्यायालय ने यह राय दी कि **'पोस्टमास्टर जनरल बनाम लिविंग मीडिया इंडिया लिमिटेड' (2012) 3 एससीसी 563** में प्रकाशित किए गए निर्णय से पहले, विलंब की क्षमादान के मामलों में राज्य और उनके कामकाज की विशेष प्रकृति के कारण, उनके प्रति न्यायिक सहानुभूति का दृष्टिकोण अपनाया जाता था। उसी समय, **पश्चिम बंगाल राज्य बनाम प्रशासक, हावड़ा नगर पालिका' (1972) 1 एससीसी 366 में प्रकाशित और 'लंका वेंकटेश्वरलू (मृत) द्वारा विधिक प्रतिनिधि बनाम आन्ध्र प्रदेश राज्य और अन्य' (2011) 4 एससीसी 363 में प्रकाशित किए गए**, जैसे विपरीत मत भी उपस्थित थे, जिनमें यह माना गया था कि, चाहे वादी कोई सरकारी संस्था हो या कोई निजी व्यक्ति, परिसीमा के प्रावधान समान रूप से लागू होंगे, और न्यायालयों द्वारा दिखाई गई कोई उदारता भी

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



समान ही रहेगी। **पोस्टमास्टर जनरल (उपर्युक्त)** के निर्णय के बाद, वर्तमान में विधि बिल्कुल स्पष्ट और असंदिग्ध है। विलंब क्षमादान एक अपवाद बना रहना चाहिए, न कि एक नियम। सरकारी वादियों को भी, निजी पक्षकारों की तरह ही, विलंब के लिए सद्भावपूर्ण, पर्याप्त और ठोस कारण सिद्ध करना होगा। ऐसे औचित्य के अभाव में, केवल आवेदक की पहचान के आधार पर विलंब को क्षमा नहीं किया जा सकता। माननीय उच्चतम न्यायालय ने आगे यह भी टिप्पणी की है कि 'राजस्थान राज्य और अन्य बनाम बाल किशन माथुर (मृत) द्वारा विधिक प्रतिनिधि' (2014) 1 एससीसी 592 में प्रकाशित किए गए और 'शेओ राज सिंह बनाम भारत संघ' (2023) 10 एससीसी 531 में प्रकाशित किए गए के निर्णयों के संयुक्त अध्ययन से यह भी स्पष्ट हो जाता है कि पोस्टमास्टर जनरल (उपर्युक्त) के निर्णय का मूल सार दो बातों में निहित है। पहली बात यह कि परिसीमा अधिनियम की धारा 5 के अंतर्गत विलंब क्षमादान संबंधित मामलों में राज्य या उसके किसी भी निकाय को कोई विशेष तरजीह नहीं दी जा सकती। राज्य को भी उन्हीं मानकों पर परखा जाना चाहिए जिन पर किसी निजी वादी को परखा जाता है। इसके विपरीत करने से परिसीमा की पवित्रता पर आंच आएगी। दूसरी बात यह कि सरकारी विभागों द्वारा विलंब की क्षमा मांगने के लिए, नौकरशाही की लालफीताशाही, प्रक्रियात्मक अड़चनों या प्रशासनिक अक्षमताओं पर बार-बार निर्भर रहना, हमेशा और हर हाल में 'परिसीमा अधिनियम' की धारा 5 के प्रयोजन के लिए 'पर्याप्त कारण' के रूप में स्वीकार नहीं किया जा सकता। यदि ऐसे कारणों को सामान्य रूप से स्वीकार कर लिया जाए, तो परिसीमा विधि के माध्यम से जो अनुशासन स्थापित करने का प्रयास किया गया है, वह कमजोर पड़ जाएगा, जिसके परिणामस्वरूप वादों में अंतहीन अनिश्चितता उत्पन्न हो जाएगी। हमने



उक्त निर्णय के अन्य भागों का भी अवलोकन किया है, जिसमें अनुच्छेद 214 और उसके बाद के अंश शामिल हैं।

10. **शिवम्मा (मृत) (उपर्युक्त)** के वाद में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा प्रतिपादित विधि के उपर्युक्त प्रावधानों को देखते हुए, अपीलकर्ताओं द्वारा विलंब का स्पष्टीकरण देते हुए दाखिल किया गया शपथ-पत्र अपर्याप्त और न्यून है। प्रतिवादी के विद्वान अधिवक्ता श्री रमेश कुमार श्रीवास्तव भी कहते हैं कि याचिकाकर्ता की सेवाएं पहले ही नियमित की जा चुकी हैं।

11. उपरोक्त के मद्देनजर, हमें अपील दाखिल करने में हुए इस अत्यधिक विलंब को क्षमा करने का कोई कारण नहीं मिलता। तदनुसार, विलंब को क्षमा करने का आवेदन अस्वीकृत किया जाता है।

12. परिणामस्वरूप, अपील भी खारिज की जाती है।

(न्यायमूर्ति अबधेश कुमार चौधरी) (न्यायमूर्ति राजन राँय)

10 मार्च 2026

अनुज सिंह